'भारत में तुर्कों की सफलता के कारण'

भारत पर तुर्कों के आक्रमण महमूद गजनवी द्वारा 11वीं शताब्दी के आरंभ में होने लगे थे। लगभग तीन दशकों में महमूद ने उत्तरी भारत के प्रमुख शासकों को पराजित करके तुर्कों का सैनिक वर्चस्व सिद्ध कर दिया था। इसके बाद बारहवीं शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश में मुहम्मद गोरी ने भारत में तुर्कों की राजनीतिक सत्ता स्थापित कर दी। इन दोनों ही अवसरों पर भारतीय शासक तुर्कों के आक्रमण का विरोध करने में असफल सिद्ध हुये।

यह आश्चर्यजनक बात है कि भारत जैसे विशाल क्षेत्र में के अनेक शासक मध्य एशिया के एक छोटे राज्य के शासक के आगे एक-एककर असफल सिद्ध हुये। अतः तुर्कों की सफलता के कारणों पर इतिहासकारों ने विशेष रूप से ध्यान दिया है। आरंभिक काल के कुछ इतिहासकारों की यह धारणा थी कि मुसलमान अपने धार्मिक विश्वासों के कारण अत्यधिक उत्साहित रहते थे। उनका विश्वास था कि धर्म के लिये प्राण न्योछावर करने पर उन्हें शहीद के रूप में स्वर्ग की प्राप्ति होगी और जीतने पर भी गाजी के रूप में स्वर्ग के भागी होंगे अतः वे पूरे उत्साह से युद्ध में भाग लेते थे और उन्हें मृत्यु भय नहीं था। कुछ इतिहासकार यह भी मानते थे कि तुर्क ठंडे प्रदेश के निवासी और मंसाहारी होने के कारण अधिक शक्तिशाली थे। इसके विपरीत भारत के लोग शांतिप्रिय प्रवृति के थे और युद्धों के प्रति उनमें विशेष उत्साह की भावना नहीं थी। परंतु इन सभी तथ्यों को अब महत्व नहीं दिया जाता है। भारतीय सैनिक भी योद्धा प्रवृति के थे और वीरता में तुर्कों से पीछे नहीं थे। इस बात की पुष्टि इस बात से होती है कि स्वयं महमूद

ने अपनी सेना में भारतीय सैनिकों को भर्ती किया। भारतीय सैनिकों की हार का कारण उनके व्यक्तिगत आचरण में नहीं बल्कि योग्य नेतृत्व के अभाव और सैन्य व्यवस्था की त्रुटियों में निहित था।

सर्वप्रथम भारत में राजनीतिक एकता का पूर्ण अभाव था। सारा देश छोटे-छोटे क्षेत्रीय राज्यों में विभक्त था। इनके शासक क्षेत्रीय विस्तार और व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा की भावना के कारण एक दूसरे से परस्पर संघर्ष में लगे रहते थे। राजनीतिक एकता के अभाव में सामन्तीकरण की प्रक्रिया का भी योगदान था क्योंकि न केवल देश विभिन्न राज्यों में बँटा हुआ था बल्कि प्रत्येक राज्य छोटे-छोटे सामन्ती क्षेत्रों में विभक्त था। शासकों की आपसी प्रतिस्पर्द्धा के कारण संयुक्त रूप से विदेशी आक्रमण का सामना करना कठिन था। यद्यपि कुछ अवसरों पर महमूद के विरुद्ध भारतीय शासकों ने एकजुट होकर संघर्ष का प्रयास किया परंतु वे इसमें सफल न हो पाये और मुहम्मद गोरी के समय ऐसा कोई महत्वपूर्ण प्रयास हुआ भी नहीं।

राजनीतिक अनेकता का एक दुष्परिणाम यह भी हुआ कि सीमांत क्षेत्र की रक्षा का समुचित प्रबन्ध नहीं हो सका। उत्तरी भारत के मैदानी क्षेत्रों के शासक सीमावर्ती क्षेत्र की रक्षा में सक्रिय रूप से योगदान देने में आनाकानी करते रहे। अतः महमूद गजनवी के आक्रमण के समय इस क्षेत्र की रक्षा का भार मुख्य रूप से हिन्दूशाही शासकों पर ही रहा। दूसरी ओर मुहम्मद गोरी के आक्रमण के समय इस क्षेत्र की रक्षा उत्तरकालीन गजनवी शासकों का दायित्व बन गई जो इस कार्य में पूरी तरह असमर्थ थे। सीमान्त क्षेत्र के असुरक्षित होने के कारण तुर्क आक्रमणकारियों के लिये भारत में प्रवेश का मार्ग सदा खुला

रखा।

राजनीतिक अनेकता और सामन्ती प्रथा का दुष्परिणाम आर्थिक जीवन के क्षेत्र में भी देखा जा सकता है। उस समय राज्य की आय का मुख्य साधन लगान अथवा भू-राजस्व के रूप में था। परन्तु सामन्ती प्रथा के कारण यह आमदनी राजा के हाथ में केन्द्रित न होकर अनेक सामन्तों के बीच विभाजित थी। इसका परिणाम यह हुआ कि शासक के हाथ में आर्थिक साधन सीमित थे और राज्य की रक्षा के लिये एक शक्तिशाली सैनिक संगठन का बोझ उठाना इनकी क्षमता से परे था। दूसरी ओर तुर्कों के राज्य केन्द्रीय सत्ता के अधीन होने के कारण आर्थिक रूप से सुव्यवस्थित थे और तुर्क सुल्तानों के लिए शक्तिशाली सैनिक संगठन को बनाये रखना बहुत कठिन नहीं था।

सामन्ती प्रथा ने सैनिक संगठन को भी कमजोर बनाया। पर्याप्त आर्थिक साधनों के अभाव में राजा के लिए विशाल सेना संगठित करना संभव नहीं था। अतः सैनिक दायित्व भी सामन्तों पर ही डाल दिया गया। प्रत्येक सामन्त एक निश्चित संख्या में सैनिक रखता था और युद्ध के समय शासक की सहायता प्रदान करता था परन्तु इस सेना का रूप एक संगठित केन्द्रीय सेना के समान नहीं था। इसमें सैनिकों के प्रशिक्षण और कार्य-कुशलता का स्तर एक समान न होने के कारण यह सेना तुर्कों की सेना के आगे कारगर ढंग से संघर्ष करने में असमर्थ थी।

तुर्कों की रणपद्धति अधिक उन्नत थी और अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग में भी उन्हें अग्रता प्राप्त थी। अधिकांश इतिहासकार यह मानते हैं कि तुर्कों की सेना में घोड़ों का प्रयोग अधिक होता था जबकि भारतीय सेना में हाथियों का प्रयोग अधिक होता था। हाथी की तुलना में घोड़ों की तेज गति के

कारण तुर्कों को सदा सुविधा होती थी। जीतने पर वे भारतीय सेना को अधिक दूरी तक खदेड़ सकते थे और हारने पर सुरक्षित स्थान पर जल्दी पहुँच सकते थे। भारतीय सेना में घोड़ों का उपयोग कम था मगर युद्ध में हाथी भी उपयोगी थे। महमूद ने भारत से हाथी प्राप्त किये थे। फिर भी सशक्त अश्वारोही के मामलों में तुर्कों की बढ़त निर्णायक थी।

भारतीय अश्वारोहियों को कुछ असुविधाओं का सामना करना पड़ता था। तुर्क चमड़े के जीन का प्रयोग करते थे जबकि भारतीय चमड़े को अपवित्र मानकर कपड़े या बोरे की जीन इस्तेमाल करते थे। इसी प्रकार तुर्कों द्वारा प्रयोग की गई रकाब अधिक मजबूत और सुविधाजनक होती थी। तुर्क सैनिकों के लिए लम्बी यात्रा करना और चलते घोड़े पर खड़े होकर हथियार चलाना संभव था जबकि भारतीय सैनिकों के लिये यह सुविधा उपलब्ध नहीं थी। तुर्क घोड़े की नाल का प्रयोग करते थे जिस कारण घोड़े के खुर सुरक्षित रहते थे और कठिन क्षेत्र में यात्रा के समय या अन्य परिस्थितियों में घोड़े के घायल होने और मरने की संभावना कम थी। इसके विपरीत नाल का प्रयोग न होने के कारण भारतीय सेना में घोड़े के घायल होने और मरने की संभावना अधिक थी। भारत में अच्छे नस्ल के घोड़े उपलब्ध न होने के कारण ऐसी क्षति को पूरा करना भी कठिन था। तुर्क सैनिकों द्वारा लोहे के कवच का प्रयोग भी आमतौर से किया जाता था। इस कारण युद्ध के समय एक तुर्क सैनिक अधिक सुरक्षित अवस्था में रहता था क्योंकि उसके शरीर का अधिक भाग लोहे के टुकड़ों से ढँका रहता था।

तुर्क सैनिकों के अस्त्र शस्त्र भारतीय सैनिक की तुलना में अधिक कारगर थे। वे धनुष विद्या में निपुण थे और उनके द्वारा विशेष प्रकार के धनुष का उपयोग होता था जिसे फारसी

में नावक करते थे। इससे निशाना भी पक्का लगता था और तीरों का प्रयोग भी अधिक कारगर रूप से होता था। तुर्कों की तलवार भी हल्की होने के कारण सैनिकों को सुविधा देती थी। तुर्कों द्वारा जलते हुये तीरों का भी उपयोग किया जाता था जो भारतीय सेना में हाथियों को आतंकित करने में सहायक होते थे। इन सभी कारणों से अधिकांशतः तुर्क सेनायें ही युद्ध में विजयी रहती थी।

भारतीय शासकों एवं तुर्क शासकों के दृष्टिकोण में भी व्यापक अंतर था। भारतीय शासक युद्ध के हार को व्यक्तिगत अपमान मानकर कभी-कभी आत्महत्या कर लेते थे जबकि तुर्क शासक युद्ध में पराजय से हतोत्साहित न होकर हार के कारणों को समझने और उसका निदान करने का प्रयास करते थे। इसलिये वे विजयी भी रहे।

कुछ इतिहासकार (परमात्मा शरण एवं मोहम्मद हबीब) ने भारतीय शासकों की हार के लिये सामाजिक परिस्थितियों को भी उत्तरदायी माना है। वर्ण एवं जाति व्यवस्था के कारण भारतीय समाज कई वर्गों में बँटा था। छुआछूत की भावना तथा भूस्वामियों द्वारा निम्न वर्ग के खेतिहर तथा अन्य श्रमिकों के शोषण के कारण समाज दुर्बल हो रहा था। शोषित वर्ग में देश या राज्य की सुरक्षा अथवा विदेशी आक्रमण के प्रतिरोध की भावना का होना संभव नहीं था। उच्च वर्ग की श्रेष्ठता की धारणा के कारण वे विदेशों से भी समुचित सम्पर्क स्थापित न कर सके और देश में पृथकतावादी प्रवृति ने घर कर लिया समुद्री यात्रा को धार्मिक अपराध माना जाने लगा। इस पृथकतावादी प्रवृति के कारण बाहरी देशों के नवीन राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा रण कौशल सम्बन्धी ज्ञान से भारतीय समाज लाभ नहीं उठा सका, जबकि विदेशों से भारत का व्यापार पर्याप्त मात्रा में होता था। दूसरी ओर भारत की धन सम्पदा तथा अन्य बातों का विदेशी

↓ आत्महत्या
① हिन्दू शाही शासक जयपाल
② शासक गोड़ के बौद्धीराय
③ काल (कुतुबद्दीन ऐबक + मुहम्मद गौरी) कुमारपाल

आक्रमणकारियों को निश्चित ज्ञान था।

तुर्कों की सामाजिक परिस्थिति इससे भिन्न थी। इस्लाम धर्म में समता का उपदेश के कारण मुसलमानों के बीच सामाजिक भेदभाव का रूप उतना जटिल और गंभीर नहीं था जितना हिन्दू समाज में था। इनकी सेना में सभी वर्गों से योग्य और सक्षम सैनिक प्राप्त किये जा सकते थे जबकि भारत में मुख्य रूप से ब्राह्मण और क्षत्रिय ही प्रशासनिक और सैनिक पदों पर नियुक्त होते थे। अतः तुर्कों के लिये अधिक मात्रा में योग्य और सक्षम सैनिकों की प्राप्ति आसान थी।

इस प्रकार हम देखते हैं कि तुर्कों की सफलता के लिये राजनीतिक, सैनिक और सामाजिक कारण ही मुख्य रूप से उत्तरदायी थे।